

नाड़ी : स्वरूप, शुद्धि एवं फलश्रुति

अरुण कुमार साव

प्रस्तावना

योग साधना विज्ञान में नाड़ियों का महत्त्वपूर्ण स्थान है। क्योंकि योग प्राणशक्ति (चेतना) पर आधारित विज्ञान है। जिसमें प्राण परिशोधन, अभिवर्द्धन और ऊर्ध्वगमन की प्रक्रिया शामिल है। महर्षि अरविन्द प्राण और नाड़ी के अन्तर्सम्बन्ध के विषय में कहते हैं कि जहाँ कहीं भी, किसी भी रूप में जीवन है, वहाँ प्राणिक ऊर्जा होनी चाहिए और वह आधार भी होना चाहिए, जिसमें यह क्रिया हो सकती है। वह आधार बहुसंख्यक नलिकाओं का समवाय है, जिनके भीतर यह ऊर्जा संचालित होती है। इन्हें ही नाड़ियाँ कहते हैं और ये सूक्ष्म शरीर का सूक्ष्म तंत्रिकीय संगठन है।¹ गोपीनाथ कविराज के अनुसार देह में प्राणशक्ति की क्रियाएँ विभिन्न श्रेणियों में विभक्त होती हैं, किन्तु इन समस्त क्रियाओं के संचालन के लिये विभिन्न मार्ग आवश्यक हैं। इन सभी मार्गों को नाड़ी कहते हैं।² नाड़ियाँ सम्पूर्ण शरीर में स्थूल एवं सूक्ष्म दोनों रूपों में व्याप्त रहता है। योग विज्ञान में नाड़ियों का तात्पर्य मानव शरीर की धमनियों, नसों या शिराओं से नहीं, वरन् उन प्रवाहों, मार्गों या वाहिकाओं से है, जिनके द्वारा प्राण व अंतश्चेतना का संचरण या प्रवाह होता है।³ शिव संहिता में 'प्राणसंचारनाडिकाः'⁴ कहकर नाड़ियों को प्राणवहा स्वीकार किया गया है।

नाड़ी का स्वरूप

नाड़ी शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत के 'नड्' धातु से हुई है, जिसका अर्थ 'प्रवाह' या 'प्रवाहित होना' है। अर्थात् जिसमें या जिससे कोई चीज प्रवाहित हो वह नाड़ी कहलाता है। श्वेताश्वतर उपनिषद्⁵ में स्रोत शब्द भी प्रवाह का सूचक है। पथ एवं प्रवाह के रूप में सृतिः एवं सारणी शब्दों का वर्णन नाड़ी वाचक अर्थ में हुआ है।⁶ महर्षि चरक ने इनके पर्याय रूप स्रोत, शिरा, धमनियाँ, रसवाहिनीयाँ, नाड़ियाँ, पन्थ, मार्ग आदि शब्दों को शरीर के धातुओं के लक्ष्य-अलक्ष्य अवकाशों का नाम कहा है।⁷ योगविज्ञान में नाड़ियों का तात्पर्य प्राण के मार्ग के रूप में स्थित हैं।⁸ अर्थात् जिसके माध्यम से शरीरगत प्राण का प्रवाह होता है। उपनिषदों के अनुसार पैर के तलवों से लेकर सिर पर्यन्त समूचे शरीर में नाड़ियों का विस्तार पाया जाता है। ये नाड़ियाँ जीवनदायिनी प्राण ऊर्जा को समूचे शरीर में प्रवाहित करती हैं। गोरक्षशतक के अनुसार प्राणादि पंचप्राण तथा नागादि पंचवायु ये जीव के रूप में हजारों नाड़ी समूहों में भ्रमण करते हैं।⁹

आदिनाथ शिव नाड़ी ज्ञान की महिमा का वर्णन करते हुए कहते हैं कि जिसे इसका (नाड़ी) सम्यक् ज्ञान है, वही मोक्ष का पात्र है।¹⁰ योगाभ्यास के लिए नाड़ी एवं शरीर विषयक ज्ञान नितान्त आवश्यक

होता है। मानव शरीर में सर्वत्र अन्यान्य नाड़ियों का जाल बिछा है अतः इस यौगिक शरीर को जानने के लिये योगाभ्यासी तथा ज्ञानियों को इन नाड़ियों की पूरी जानकारी होना आवश्यक है।¹¹ क्योंकि मानव शरीर के अन्दर सूक्ष्मरूप से समस्त विश्व विद्यमान है जिसमें सात द्वीपों सहित मेरु पर्वत है, साथ ही यहाँ पर नदियाँ, समुद्र, क्षेत्र एवं क्षेत्रफल विराजमान हैं। इसी शरीर में ऋषि, मुनि और ग्रह नक्षत्र, पवित्र तीर्थ, पवित्र पीठ तथा पीठाधिदेश विद्यमान हैं। इसी भौतिक शरीर में सृष्टि एवं संहार कर्ता, चन्द्र एवं सूर्य भ्रमण करते हैं। आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी सहित त्रिलोक विद्यमान हैं। ब्रह्माण्ड की संज्ञा से अभिहित इस शरीर में जो योगी इन तत्त्वों को जानता है वह निःसन्देह योगज्ञ है।¹²

नाड़ियों की संख्या

जाबालदर्शनोपनिषद्¹³ के अनुसार यह मानव शरीर नाड़ियों का पुंज ही है। जिसप्रकार पलाश का पत्ता सर्वत्र तन्तुओं से व्याप्त रहता है, उसी प्रकार सब प्राणियों का शरीर नाड़ियों से व्याप्त है।¹⁴ शरीर में स्थित नाड़ी जाल इतना जटिल एवं विस्तृत है कि योग विषयक ग्रंथों जैसे उपनिषद्, हठयोग, तंत्र एवं आयुर्वेद में उसकी संख्या के बारे में मत एक्यता नहीं है। कहीं पर इनकी संख्यागत और कहीं पर इनके उद्गम स्थल में भिन्नता है। फिर भी उपनिषद् एवं हठयौगिक ग्रन्थों में नाड़ियों के विषय में अत्यधिक समानता परिलक्षित होता है।

शारदा तिलक में 'नाड्योऽनन्ताः'¹⁵ कहकर नाड़ियों की संख्या अनन्त बताया गया है। प्रमुख नाड़ियों में से ही स्थूल-सूक्ष्म बहत्तर हजार नाड़ियाँ निकली हैं। इनकी पृथक् पृथक् गिनती करना बहुत कठिन है। ये इस प्रकार फैली है, जैसे पीपल के पत्ते में स्थूल-सूक्ष्म नसें फैली होती है।¹⁶ योगरत्नाकर में मनुष्य शरीर के अन्तर्गत सबसे अधिक साढ़े तीन करोड़ नाड़ियों का उल्लेख मिलता है। इनमें से दस नाड़ियाँ प्रधान है। इन दस नाड़ियों में भी क्रमशः तीन इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना प्रमुख हैं।¹⁷ रुद्रयामल (17.57) में रोमों की संख्या साढ़े तीन करोड़ कही गयी है, इन्हें समस्त नाड़ी-मुख ही जानना चाहिए। स्वच्छन्द तन्त्र के अनुसार जितने रोमकूप हैं, उतनी ही नाड़ियाँ हैं।¹⁸ प्रपंचसार तन्त्र के अनुसार शरीर में नाड़ियों की संख्या शाखा तथा उपशाखा सहित तीन लाख पचास हजार से अधिक है। जो सुषुम्ना नाड़ी के पर्वों से निकलकर सम्पूर्ण शरीर में विस्तृत रूप से विद्यमान है।¹⁹ शिवसंहिता में भी तीन लाख पचास हजार नाड़ियों का वर्णन मिलता है। यहाँ पर तीन लाख पचास हजार नाड़ियों में प्रधान चौदह नाड़ियाँ मानी गयी हैं।²⁰ किन्तु अन्य हठयौगिक ग्रन्थों जैसे हठप्रदीपिका, घेरण्ड संहिता, गोरक्षशतक, गोरक्ष संहिता, हठरत्नावली, वशिष्ठ संहिता, योग रसायन, षट्चक्रनिरूपण, योगबीज और शिवस्वरोदय आदि में इनकी संख्या बहत्तर हजार (72,000) बतायी गयी है, ऐसा ही वर्णन उपनिषद् में भी मिलता है। त्रिशिखब्राह्मणोपनिषद्, बृहदारण्यक तथा अन्य योग उपनिषदों में इनकी संख्या 72,000 के साथ-साथ अन्य प्रधान नाड़ियों का स्पष्ट वर्णन किया गया है।²¹ योग चुड़ामणी आदि कुछ योगविषयक उपनिषदों में बहत्तर नाड़ियों को मुख्य स्वीकार किया गया है। कठ और छान्दोग्य उपनिषदों में इनमें एक सौ एक नाड़ियों को मुख्य माना गया है।²² यद्यपि इन एक सौ एक और बहत्तर नाड़ियों की गणना इन उपर्युक्त व अन्य उपनिषदों में नहीं की गयी है।²³ नाड़ियों की संख्या में यह भेद नाड़ियों के उप-विभाजन के कारण होना सम्भव है। नाड़ियाँ स्थूल व सूक्ष्म दो प्रकार की होती है। स्थूल नाड़ियों का ज्ञान इन्द्रियगम्य होता है, परन्तु सूक्ष्म नाड़ियों का ज्ञान इन्द्रियगम्य नहीं होता।²⁴ बहत्तर हजार नाड़ियाँ में से बहत्तर मुख्य कही गई हैं। बहत्तर नाड़ियों में भी चौदह, चौदह में दस और दस में भी तीन नाड़ियाँ प्रमुख मानी गयी है। ये तीन नाड़ियाँ इड़ा, पिंगला व सुषुम्ना है। इन तीन नाड़ियों में भी सुषुम्ना प्रमुख है और कहा गया है कि सुषुम्ना परमात्मा

की मुख्य शक्ति है।²⁵ इस सुषुम्ना के भीतर एक अति सूक्ष्म नाड़ी अवस्थित है जो कि प्रमुखतम है, इसे ब्रह्मनाड़ी कहा गया है। सुषुम्ना से ही शरीरस्थ समस्त नाड़ियाँ सम्बन्धित हैं। इसी से चेतना, अन्य नाड़ियों के माध्यम से सम्पूर्ण शरीर में प्रवाहित होती है। सुषुम्ना नाड़ी के अंदर वज्रा नाड़ी बतायी गयी है तथा उस वज्रा के अंदर चित्रा या चित्रिणी नामक नाड़ी बतायी गयी है। तंत्र में मस्तिष्क व सुषुम्ना को ही चेतना का केन्द्र बताया गया है।

कन्द : नाड़ियों की उत्पत्ति स्थान

सभी मनुष्यों का शरीर अपने अंगुली से छियानवें अंगुली परिमाण का होता है। इस शरीर में गुदा के ऊपर दो अंगुल और मेढ्र (लिंग प्रदेश) के नीचे दो अंगुल को शरीर का मध्य कहा जाता है। मेढ्र के नीचे एक अंगुल ऊँचे और गुदा के मध्य में कन्द स्थान है जो सभी नाड़ियों का उद्गम स्थान है। वह चार अंगुल ऊँचा, चार अंगुल लम्बा-चौड़ा अण्डे की आकृति का है और मेद, मज्जा, हड्डियों और रक्त से आवृत है।²⁶ वशिष्ठ संहिता²⁷ के अनुसार इस शरीर में देह मध्य से नौ अंगुल ऊपर, चार अंगुल ऊँचा और चार अंगुल फैला हुआ कंद है। जाबालदर्शनोपनिषद् के अनुसार गुदा से दो अंगुल ऊपर और मेढ्र लिंग से दो अंगुल नीचे का भाग मनुष्य शरीर का मध्य कहा गया है। मनुष्य का कन्द स्थान शरीर मध्य से लगभग नौ अंगुल ऊपर बताया गया है, जहाँ पर कन्द अण्डे के आकार वाला चार अंगुल लम्बा तथा चार अंगुल चौड़ा है, जो सुन्दर त्वचा आदि से सुशोभित है।²⁸

उपर्युक्त संदर्भ के अनुसार यह कहा जा सकता है कि गुदा से दो अंगुल ऊपर शरीर मध्य का एक अंगुल तथा शरीर मध्य से नौ अंगुल ऊर्ध्व अर्थात् बारह अंगुल प्रमाण वाला मूल स्थान के समीपवर्ती क्षेत्र को कन्द स्थान माना जा सकता है। यह चार अंगुल चौड़ा तथा उतने प्रमाण में लम्बाई वाला है, जिसका आकार खगाण्ड (पक्षियों के अण्डे) जैसा है, जिसका स्वरूप योगियों द्वारा निर्धारित एवं अनुमानित किया गया है।²⁹ अतः इन प्रमुख नाड़ियों का उद्गम स्थान सर्वत्र कन्दस्थान ही माना गया है। नाड़ियों का केन्द्र होने के कारण ही उसे नाड़ी कन्द या नाभिकन्द भी कहते हैं।

बहत्तर हजार नाड़ियाँ

कन्द से ही शरीर में व्याप्त समस्त बहत्तर हजार नाड़ियाँ उत्पन्न हुई हैं।³⁰ यही कन्द बहत्तर हजार नाड़ियों का द्वार है।³¹ जहाँ से नाड़ियाँ निकलकर शरीर के विभिन्न भागों में स्थित हैं। शरीर में शिराओं और अस्थियों से निर्मित बहत्तर हजार नाड़ियों के द्वार हैं जो शरीर में वायु के प्रवेश मार्ग हैं।³² वशिष्ठ संहिता के अनुसार मेरुदण्ड के दोनों पार्श्वों में बत्तीस अस्थियों के मध्य से बहत्तर हजार नाड़ियों का उद्गम माना गया है जो सम्भवतः कन्द स्थान को ही इंगित करता है।³³ शिवस्वरोदय के अनुसार बहत्तर हजार नाड़ियों की उत्पत्ति नाभिस्थ कन्द से मानी गयी है। वस्तुतः यहाँ पर नाभिस्थ कन्द का अभिप्राय कन्द स्थान से ही है जो नाभि केन्द्र के नीचे स्थित है। यहाँ से सभी नाड़ियाँ बीजांकुर की भाँति अर्थात् जिस प्रकार बीज से अंकुर उत्पन्न होता है। उसी प्रकार से समस्त नाड़ियाँ कन्द से निकलकर शरीर के विभिन्न भागों की ओर जाकर सम्पूर्ण शरीर में समाहित हैं।³⁴ इन बहत्तर हजार नाड़ियों के अतिरिक्त अन्य नाड़ियों का उल्लेख करते हुए शिवसंहिता³⁵ में कहा गया है कि दूसरी नाड़ियाँ भी मूलाधार से उत्पन्न हुई हैं जो जिह्वा, लिंग, नेत्र, दोनों पादांगुष्ठ, कर्ण तथा स्कन्ध, हाथ के अंगुठे, गुदा, उदर आदि अंगों में जाकर इन नाड़ियों का अन्त हुआ है। इस प्रकार ये सभी नाड़ियाँ मूलाधार से उत्पन्न होकर अपने-अपने गन्तव्य स्थान पर पहुँचकर समाप्त हो जाती हैं। इन्हीं नाड़ियों तथा इनकी सहायक उप नाड़ियों से अन्यान्य नाड़ियाँ शरीर में विस्तृत रूप में विद्यमान हैं।

बहत्तर नाड़ियाँ

बहत्तर नाड़ियों के विषय में गोरक्षशतकम् में कहा गया है कि बहत्तर हजार नाड़ियों में मुख्य बहत्तर ही है। सम्भवतः प्रत्येक एक हजार नाड़ियों में से एक-एक नाड़ियों को प्रमुख मानकर इनकी संख्या बहत्तर बतलायी गयी है,³⁶ इसके अलावा अन्यान्य जगह में भी ठीक इसी प्रकार का उल्लेख मिलता है। यहाँ पर भी बहत्तर हजार नाड़ियों में से बहत्तर नाड़ियों को एकत्रित किया गया है अर्थात् प्रत्येक एक हजार में से एक-एक नाड़ियों को चयनित किया गया है।³⁷ शिवस्वरोदय में बहत्तर हजार नाड़ियों में से चौबीस नाड़ियों का उल्लेख हुआ है, जिसमें कहा गया है कि कन्द से दस नाड़ियाँ ऊपर की ओर तथा दस नाड़ियाँ नीचे की ओर गयी हैं जिसमें दो नाड़ियाँ कर्णभाग की ओर तिरछी हुई हैं। इसी प्रकार कुछ और नाड़ियाँ मिलकर चौबीस नाड़ियों का वर्णन प्राप्त होता है।³⁸

चौदह प्रमुख नाड़ियाँ

बहत्तर हजार में से चौदह प्रमुख प्राण संवाहक नाड़ियों का अनेक उपनिषदों जैसे जाबालदर्शनोपनिषद्, शाण्डिल्योपनिषद्, वराहोपनिषद् एवं हठयोग के ग्रन्थों जैसे शिवसंहिता, हठरत्नावली, वशिष्ठ संहिता, याज्ञवल्क्य संहिता, हठतत्वकौमुदी आदि में वर्णन मिलता है।³⁹ इन प्रमुख चौदह नाड़ियों में सुषुम्ना, इडा, पिंगला, सरस्वती, पूषा, वरुणा, हस्तजिह्वा, यशस्विनी, अलम्बुषा, कुहू, विश्वोदरी, तपस्विनी, शंखिनी और गांधारी हैं।⁴⁰ जाबालदर्शन उपनिषद् में इन प्रमुख चौदह नाड़ियों के चौदह देवताओं का भी उल्लेख मिलता है जिनमें सुषुम्ना नाड़ी के देवता शिव, इडा के देव विष्णु, पिंगला के देव ब्रह्मा, सरस्वती के देवता विराट्मुनि, पूषा के देव अधिदेव, वारुणा के वायुदेव, हस्तजिह्वा के देव वरुण, यशस्विनी के देव सूर्य, अलम्बुषा के देव जलमय वरुण, कुहू के देव क्षुधा, गान्धारी व शंखिनी के देव चन्द्रमा, पयस्विनी के प्रजापति तथा विश्वोदरी के देव अग्नि हैं।⁴¹ शाण्डिल्य उपनिषद् में सुषुम्ना, इडा, पिंगला, सरस्वती, वारुणी, पूषा, हस्त-जिह्वा, यशस्विनी, कुहू, शंखिनी, पयस्विनी, अलम्बुषा और गांधारी इन चौदह नाड़ियों को मुख्य माना गया है।⁴² जाबालदर्शन उपनिषद् में भी यद्यपि चौदह ही प्रमुख नाड़ियाँ स्वीकार की गयी हैं किन्तु उसमें पयस्विनी के स्थान पर तपस्विनी नाम प्राप्त होता है।⁴³ शाण्डिल्य उपनिषद् में मूलतः इन्हीं चौदह प्रधान नाड़ियों की गणना की है किन्तु उनके गन्तव्यों का विवरण देते हुए सौम्या नामक एक अन्य नाड़ी का नाम भी लिया गया है, जो पैर के अंगूठे तक जाती है।⁴⁴ वराह उपनिषद् में भी पूर्व परिमाण चौदह नाड़ियाँ ही स्वीकार की गयी हैं।⁴⁵ यह भी स्मरणीय है कि इस उपनिषद् में स्वीकृत नाड़ियाँ निम्नलिखित हैं - सुषुम्ना, अलम्बुषा, कुहू, वरुणी, यशस्विनी, पिंगला, पूषा, पयस्विनी, सरस्वती, शंखिनी, गांधारी, इडा, हस्तजिह्वा, विश्वोदरी। योग शिखा उपनिषद् तथा शाण्डिल्य उपनिषद् में स्वीकृत यशस्विनी और पयस्विनी के स्थान पर बिलम्बिनी और शूरानाम प्राप्त होता है और इनके अतिरिक्त क्षुधा को उत्पन्न करने वाली राका नाम की पन्द्रहवीं नाड़ी का भी उल्लेख मिलता है।⁴⁶ वशिष्ठसंहिता में भी प्रमुख नाड़ियों का वर्णन किया गया है जिनमें चौदह नाड़ियों का नाम सहित वर्णन किया गया है।⁴⁷ वस्तुतः शरीर में व्याप्त सभी नाड़ियाँ मुख्य हैं किन्तु प्राणवाहिनी अर्थात् जहाँ पर प्राण का प्रवाह प्रमुखता से होता है ऐसी नाड़ियों की संख्या शास्त्रों में कहीं पर चौदह और कहीं पर दस बतलायी गयी है। जाबालदर्शनोपनिषद् में अत्यन्त सुन्दर रूप से इन चौदह नाड़ियों के स्थान का भी निरूपण किया गया है। सुषुम्ना को मुख्य नाड़ी मानकर सभी नाड़ियों की स्थिति का उल्लेख किया गया है। सुषुम्ना को कन्द से शिर पर्यन्त विस्तारित मानकर सुषुम्ना के वाम तथा दक्ष भाग में क्रमशः इडा और पिंगला की स्थिति बतलायी गयी है। सरस्वती और कुहू सुषुम्ना नाड़ी के समीप ही स्थित मानी गयी है। गान्धारी और हस्तजिह्वा अग्रभाग में स्थित हैं। पिंगला के पृष्ठ और अग्रभाग में पूषा और यशस्विनी और कुहू के मध्य में वरुणा स्थित है। कन्द के मध्य में पहुँची हुई अलम्बुषा

गुदा में स्थित है। पूर्णिमा के चन्द्र सदृश प्रकाशित सुषुम्णा के पूर्व में कुहू स्थित है। ऊपर और नीचे की ओर स्थित इड़ा वाम नासिकाग्र तक जाती है तथा पिंगला दक्ष नासिकाग्र तक जाती है। यशस्विनी वाम पाद के अंगुष्ठ तथा पूषा पिंगला के पृष्ठ भाग से होते हुए वाम चक्षु तक पहुँचती है। पयस्विनी दक्षिण कर्ण तक स्थित है। सरस्वती जिह्वा के अग्रभाग तथा दक्षिण पाद के अंगुष्ठ पर्यन्त हस्तजिह्वा स्थित है। शंखिनी नामक नाड़ी की स्थिति दक्ष कर्ण तक एवं गान्धरी नाड़ी का अन्त दक्षिण नेत्र में होता है। विश्वोदरा नाड़ीकन्द के मध्य में ही स्थित है।⁴⁸ याज्ञवल्क्य संहिता में भी चौदह प्रमुख नाड़ियों का उपदेश दिया गया है। यहाँ पर गार्गी के प्रश्नों का समाधान करते हुए याज्ञवल्क्य मुनि ने चौदह नाड़ियों एवं उनके शरीरस्थ स्थानों का विस्तृत वर्णन किया है।⁴⁹

दस प्रमुख नाड़ियाँ

प्राणवाहिनी दस प्रमुख नाड़ियों की नामावली ध्यानबिन्दूपनिषद्, योगचूड़ामण्युपनिषद्, त्रिशिखब्राह्मणोपनिषद्, शिवस्वरोदय, योगरत्नाकर, सिद्धसिद्धान्त पद्धति, गोरक्ष शतक आदि ग्रन्थों में देखने को मिलती है।⁵⁰ तथा जिन उपनिषदों या हठयोगिक ग्रन्थों में चौबीस या चौदह नाड़ियों का वर्णन किया गया है, उनमें इन दस नाड़ियों का भी समावेश किया गया है।

‘गोरक्षपद्धति’ एवं ‘गोरक्षशतकम्’ के अनुसार ये प्रमुख दस नाड़ियाँ इड़ा, पिंगला, सुषुम्णा, गान्धरी, हस्तिजिह्विका, पूषा, यशस्विनी, अलम्बुषा, कुहू, शंखिनी हैं।⁵¹ शिवस्वरोदय के अनुसार चौबीस प्रमुख नाड़ियाँ बतलाकर प्रधान प्राणवाहिनी दस नाड़ियों का उल्लेख करते हुए कहा गया है कि ऊपर नीचे विपरीत कोणों से निकली ये नाड़ियाँ जिस स्थान पर आपस में परस्पर संयुक्त होती हैं, उस स्थान का आकार चक्र के सदृश होता है। ये सभी की सभी नाड़ियाँ प्राणशक्ति द्वारा नियंत्रित होती हैं। यहाँ पर भी उपर्युक्त दस नाड़ियों की नामावली प्राप्त होती है।⁵²

तीन प्रमुख नाड़ी

सभी नाड़ियों में सर्वाधिक महत्व इड़ा, पिंगला और सुषुम्णा को दिया गया है तथा इन तीनों को प्रधान नाड़ी के रूप में अभिहित किया गया है।⁵³ हठरत्नावली में भी समस्त नाड़ियों में तीन नाड़ियों को ही मुख्य माना गया है। इड़ा और पिंगला नाड़ियों को सोम और सूर्य के समान बतलाया गया है। यह तमस् और रजस् रूप में मेरु के वाम व दक्षिण भाग में स्थित बतलायी गयी हैं। इड़ा नाड़ी को गंगा तथा पिंगला को यमुना एवं सुषुम्णा को सरस्वती नदियों के समान माना गया है। तीनों नाड़ियों की उपमा वीणा तन्तु के समान बतलाते हुए कहा गया है कि सुषुम्णा मेरु अस्थियों के बीच में स्थित है।⁵⁴ इसी ग्रंथ में अन्यत्र पिंगला का पर्यायवाची दम्भिनी, सूर्या, यमिनी, काक्षरा, कलाग्नि, रूद्री और चण्डी नाम से मिलता है।⁵⁵ तथा चन्द्रा, सिनिवाली, गंगा और अमरबोधिता को इड़ा का पर्यायवाची बताया गया है।⁵⁶

इन प्रधान नाड़ियों के सन्दर्भ वशिष्ठ संहिता में विस्तृत रूप में वर्णन हैं, कि सुषुम्णा के वाम भाग तथा दक्षिण भाग में क्रमशः इड़ा और पिंगला है जो मानव शरीर में चन्द्र एवं सूर्य के द्योतक स्थान के रूप में प्रसिद्ध है, अर्थात् शरीर में इड़ा नाड़ी में चन्द्रमा का प्रवाह तथा पिंगला नाड़ी में सूर्य का प्रवाह रहता है। सूर्य एवं चन्द्र शरीर में भ्रमण करते रहते हैं। चन्द्रमा तामस का प्रतीक अर्थात् रात्रि का द्योतक है। सूर्य राजस् अर्थात् दिन का द्योतक है। इन नाड़ियों के कालों को दिवा एवं रात्रि की संज्ञा से अभिहित किया गया है। सुषुम्णा नाड़ी दिवा एवं रात्रि कालों का अतिक्रमण करने वाली अर्थात् तीनों ही कालों का भोग करने वाली मानी गयी है।⁵⁷ लगभग सभी योग विषयक उपनिषदों, हठयोग एवं तन्त्र के ग्रन्थों में इनका पर्याप्त वर्णन किया गया है।

इन नाड़ियों में बायीं ओर चन्द्र नाड़ी इडा, दक्षिण ओर सूर्य नाड़ी पिंगला और मध्य में सुन्दर खिले हुए धतुरे के पुष्प के समान सुषुम्णा नाड़ी स्थित है। इस प्रकार मेरुदण्ड का मुख सुषुम्णा, इडा और पिंगला के सहभाव से ऐसा प्रतीत होता है, मानो चन्द्र और सूर्य से युक्त मेरु शिखर हो।⁵⁸

गोरक्षसंहिता (1/31), गोरक्षशतकम्⁴⁰, गोरक्षपद्धति⁴⁰ एवं शिवस्वरोदय (41) के अनुसार इडा, पिंगला और सुषुम्णा नाड़ियाँ प्राणमार्ग का आश्रय हैं, जिसमें सदैव प्राण प्रवाहित होता रहता है। तथा इडा के देवता चन्द्रमा, पिंगला के देवता सूर्य और सुषुम्णा के देवता अग्नि हैं।⁵⁹ शिवसंहिता में त्रिविध नाड़ियों के सन्दर्भ में इनकी स्थिति को स्पष्ट करते हुए कहा गया है कि इडा नाम की नाड़ी जो कि शरीर में स्थित मेरु के वाम भाग में स्थित है वह सुषुम्णा नामक नाड़ी से लिपटकर वाम नासिकाग्र तक पहुँचती है, एवं जो इन दोनों नाड़ियों के बीच की नाड़ी है वह निश्चित ही सुषुम्णा नाड़ी है।⁶⁰ षट्चक्रनिरूपणम् में इन त्रिविध नाड़ियों के सन्दर्भ में विस्तृत विवेचन किया है। कहा गया है कि शरीर में स्थित मेरुदण्ड, जिसे साधारणतया रीढ़ की हड्डी कहते हैं, विस्तार मूलाधार स्थान से लेकर ग्रीवा पर्यन्त है। इसके बाह्य देश में शशि (इडा) और मिहिर (पिंगला) नामक नाड़ियाँ हैं। मेरु के बाँयी ओर इडा और दक्षिण की ओर पिंगला नामक नाड़ी स्थित हैं। इनकी समानता सूर्य और चन्द्र से की जाती है। सुषुम्णा नाड़ी मेरु के मध्य में स्थित है, जिसका स्थान कन्दस्थान से लेकर ब्रह्मरन्ध्र पर्यन्त है।⁶¹

प्रमुखतम नाड़ी सुषुम्णा

सुषुम्णा साधना का महात्म्य बताते हुए तंत्रसार में कहा गया है कि सुषुम्णा से बड़ा तीर्थ, जप, ध्यान आदि कुछ नहीं है। सुषुम्णा परम गति है। (सुषुम्नैव परं तीर्थम् सुषुम्नैव परोजपः। सुषुम्नैव परं ध्यानं सुषुम्नैव परागतिः) दर्शनोपनिषद् (अश्वमेध सहस्राणि वाजपेय शतानि च) में सुषुम्णा साधना का फल अश्वमेधों, वाजपेय यज्ञों से अधिक बताया है। हठयोग के साधना में भी सुषुम्णा नाड़ी को सर्वाधिक महत्वपूर्ण माना गया है। शिवसंहिता में अन्य सभी नाड़ियों का आश्रय सुषुम्णा नाड़ी को ही माना गया है, तथा कहा गया है कि सुषुम्णा का आश्रय करके समस्त नाड़ियाँ शरीर के विभिन्न भागों में विद्यमान रहती हैं।⁶² वशिष्ठसंहिता में नाड़ी उत्पत्ति के एक प्रसंग में कहा है कि सुषुम्णा नाड़ी कन्द के मध्य में स्थित है।⁶³

हठप्रदीपिका में सुषुम्णा के पर्यायवाची शून्यपदवी, ब्रह्मरन्ध्र, महापथ, श्मशान, शाम्भवी, और मध्यमार्ग है।⁶⁴ योगशिखोपनिषद् में इसे विश्वरूपिणी तथा समस्त दूषणों से रहित ब्रह्मरूप बताया गया है।⁶⁵ शाडिल्योपनिषद् में सुषुम्णा नाड़ी को विश्वधारिणी कहा गया है, यह नाड़ी मोक्षमार्ग के नाम से भी प्रसिद्ध है। सुषुम्णा नाड़ी का विस्तार गुदा भाग के पीछे से लेकर अर्थात् कन्दस्थान से लेकर मेरुदण्ड से होते हुए ब्रह्मरन्ध्र पर्यन्त विद्यमान है। जिसको सूक्ष्म तथा वैष्णवी आदि पर्यायों से भी अभिहित किया गया है।⁶⁶ याज्ञवल्क्य स्मृति में सुषुम्णा को अव्यक्ता सूक्ष्मा और वैष्णवी नाम से भी अभिहित किया गया है।⁶⁷ अद्वैतोत्तरकोपनिषद् में वर्णन है कि सुषुम्णा नामक ब्रह्मनाड़ी सूर्यरूपिणी है, वह पूर्णचन्द्र के तेजवाली है। वह मूलाधार से ब्रह्मरन्ध्र तक जाती है। उसके साथ सूक्ष्म तन्तु से जुड़ी अति ज्वलन्त कुण्डलिनी है। उसका भावनात्मक दर्शन करने से मनुष्य सब पापों और बन्धनों से छुटकारा प्राप्त कर लेता है।⁶⁸ संगीत रत्नाकर और सहानुभूतिक मेरुतंत्र में सुषुम्णा को सात सौ महत्वपूर्ण नाड़ियों से घिरा बताया है तथा ये सभी नाड़ियाँ दासी तथा सुषुम्णा को रानी माना है। याज्ञवल्क्य स्मृति के अनुसार समस्त नाड़ियों में तीन मुख्य नाड़ियाँ हैं जो इडा, पिंगला और सुषुम्णा है इनमें भी सर्वोत्तम नाड़ी सुषुम्णा है। यह नाड़ी विश्वधारिणी और मुक्ति मार्ग के नाम से जानी जाती है।⁶⁹ सुषुम्णानाड़ी शरीर पृष्ठभाग (मेरुदण्ड) में स्थित है, जो कन्द से लेकर मूर्धापर्यन्त होते हुए ब्रह्मरन्ध्र तक विद्यमान है।⁷⁰ गोरक्षनाथ के अनुसार यह सुषुम्णा नाड़ी ब्रह्मदण्ड मार्ग से ब्रह्मरन्ध्र पर्यन्त प्रवाहित होती रहती है।⁷¹ हठरत्नावली ग्रन्थ के अनुसार सुषुम्णा नाड़ी को सरस्वती नदी

के सदृश माना गया है तथा अन्य नाड़ियों को इससे निम्न नाड़ी के रूप में स्वीकार किया गया है।⁷² योगबीज में सुषुम्ना नाड़ी के सन्दर्भ में कहा गया है कि शरीर में स्थित जो वज्रदण्ड (मेरुदण्ड/रीढ़ की अस्थि) है उसके बीच में इक्कीस मणियाँ (चक्र) हैं उन मणियों के मध्य सुषुम्ना नामक नाड़ी सूत्र के समान व्याप्त है अर्थात् जिस प्रकार से सूत्र में मणियाँ गुथी रहती हैं उसी प्रकार से सुषुम्ना नाड़ी में समस्त चक्र गुंथे रहते हैं। यह सुषुम्ना नाड़ी मोक्षमार्ग तथा विश्वाधर के रूप में प्रसिद्ध है। जो योगी (साधक) इस सुषुम्ना में चन्द्र एवं सूर्य नाड़ियों से प्राण को निरुद्ध कर प्रवाहित करता है वह काल को जीत कर अर्थात् काल का अतिक्रमण कर मोक्षमार्ग को प्राप्त होता है।⁷³

योग रत्नाकर⁷⁴ में उल्लेख है कि सुषुम्ना नाड़ी के मुख देश से वज्रिणी नाड़ी का उद्गम होता है। यह वज्रिणी भी शिर पर्यन्त गयी हुई है। इस वज्रिणी के भी मध्य में चित्रा नाड़ी हैं, जो मृणाल तन्तु के सदृश अत्यन्त सूक्ष्म है। और यह सुषुम्ना के मध्य में स्थित पृथ्वी स्थानी कमल अर्थात् मूलाधार चक्र के अन्दर से प्रारंभ होती है। इसका विस्तार अति सूक्ष्म और सीधा है। उस चित्रा नाड़ी के भी अन्दर अत्यन्त महिमाषालिनी ब्रह्मनाड़ी है। यह ब्रह्मनाड़ी इतनी सूक्ष्म है कि केवल योगीजन ही इसे जा सकते हैं। यह स्वयंभू लिंग के अग्रभाग से प्रारंभ होकर उपर स्थित ब्रह्मरन्ध्र पर्यन्त जाती है। यह ब्रह्मनाड़ी अत्यन्त सूक्ष्म तो है ही, करोड़ों सूर्य के समन्वित तेज के सदृश उज्ज्वल अर्थात् तेजयुक्त और गतिमति विद्युत के समान दीप्तिमति और गतिमति है।

सुषुम्ना नाड़ी के उत्पत्ति स्थान कन्द के समीप ही समस्त नाड़ियों के रन्ध्रों अर्थात् मुख को ढककर शक्ति अर्थात् कुण्डलिनी बैठी हुई है, जिसके कारण प्राण सुषुम्ना के मध्य में प्रवाहित नहीं हो पा रहा है। सुषुम्ना नाड़ी की उत्पत्ति मूलपद्म जो कन्द है उनके ऊपर एक त्रिकोणाकार योनि है उसी के मध्य से यह निकली है यहीं पर शक्ति (कुण्डलिनी) निवास करती है। इसके वाम में इड़ा तथा दक्षिण में पिंगला नामक नाड़ियाँ हैं। इस सुषुम्ना का विस्तार रन्ध्रों के सहित सहस्रनाल पद्म के ऊपर तक है।⁷⁵ सहस्रपद्मनाल के मध्य में अधोवदना (नीचे की ओर मुख वाली) सुषुम्ना ब्रह्मरन्ध्र से लेकर नीचे (मूलाधार) तक स्थित है। इन तीनों ही नाड़ियों का समागम (मिलन) ब्रह्मरन्ध्र तथा मूलाधार में होता है। इड़ा नाड़ी को जान्हवी (गंगा), पिंगला को सूर्य कन्या (यमुना) तथा सुषुम्ना को सरस्वती नदियों के समान बताया गया है। यह सरस्वती ही ब्रह्मनाल में अभिगुप्त रूप से विद्यमान है, इन तीनों ही नाड़ियों का संगम त्रिवेणी कहा गया है, त्रिवेणी यहाँ पर प्रयाग (तीर्थों का राजा) के रूप में माना गया है इन नाड़ियों के संगम में सिद्ध हृदय लोग ध्यान लगाने से मुक्त होते हैं।⁷⁶ इसी का प्रकार विस्तृत वर्णन शिवसंहिता में भी देखने को मिलता है।⁷⁷

स्वरयोग में वर्णन है कि जो व्यक्ति नाड़ी, प्राण, तत्त्व तथा सुषुम्ना के मध्य इनके संयोग को ठीक प्रकार से जानता है वह निश्चित ही मोक्ष का अधिकारी होता है।⁷⁸ सुषुम्ना नाड़ी में जिस समय प्राण का प्रवाह होता है उस समय व्यक्ति को कोई भी भौतिक कार्य नहीं करना चाहिए क्योंकि शून्य स्वर (सुषुम्ना) के प्रवाह काल में समस्त कार्यों के फलों का नाश हो जाता है, यह समय वैराग्य उत्पन्न करने वाला होता है।⁷⁹

नाड़ीशुद्धि

महायोग विज्ञान⁸⁰ का कथन है कि मलों से भरी हुई नाड़ियों में प्राणवायु अवरुद्ध रहता है। ऐसे अवरोधों की स्थिति में प्राणायाम कैसे सफल हो? इसलिए सर्वप्रथम नाड़ीशोधन करना चाहिए। और उसके पश्चात प्राणायाम का अभ्यास। यही बात स्वात्मारामजी भी कहते हैं कि यदि नाड़ियाँ मल से भरी हुई हों तो प्राण मध्यमार्ग सुषुम्ना में नहीं चल सकता। फिर कार्यसिद्ध कैसे होगी?⁸¹

प्राणायाम के अभ्यास से नाड़ियों का समूह शुद्ध होता जाता है, तब प्राण भेदन करते हुए सरलता से सुषुम्ना में प्रवेश कर जाते हैं।⁸² सिद्धासन से शरीरस्थ बहत्तर हजार नाड़ियों का मलशोधन होता है।⁸³

मलों से भरे हुए नाड़ियों, चक्रों की जब शुद्धि हो जाती है तो योगी प्राण नियंत्रण या संग्रह कर सकने में समर्थ होता है।⁸⁴ अतः साधक को प्रतिदिन सात्विक बुद्धि से प्राणायाम करना चाहिए। जिससे सुषुम्ना नाड़ी में विद्यमान मल दूर हो जाये।⁸⁵

हठयोग में नाड़ीशुद्धि की विधि का वर्णन करते हुए कहा गया है कि पद्मासन में बैठकर पहले चन्द्रनाड़ी से श्वांस को अन्दर लेना चाहिए फिर अपनी सामर्थ्यानुसार श्वांस को रोककर सूर्यनाड़ी से श्वांस को छोड़ना चाहिए। और तब पुनः प्राणवायु को सूर्यनाड़ी द्वारा खींचें फिर विधिवत् कुम्भक करके चन्द्रनाड़ी से वायु को छोड़ना चाहिए।⁸⁶ इसप्रकार बांये और दाहिने नासिका से लगातार प्राणायाम का अभ्यास करने से योगसाधक का नाड़ी समूह तीन मास से कुछ अधिक समय में निर्मल हो जाते हैं।⁸⁷ हठरत्नावली में नाड़ीशोधन की इस प्रक्रिया के अन्तर्गत सूर्य एवं चन्द्रमा के दृश्य को ध्यान करते हुए यह अभ्यास करने का निर्देश किया है।⁸⁸ योगतत्त्वोपनिषद में नाड़ीशोधन के इस विधि में उल्लेख किया है कि इडा नाड़ी से सोलह मात्रा तक पूरक, पूरित वायु का चौसठ मात्रा तक कुम्भक और फिर पिंगला नाड़ी से कुंभित वायु का बत्तीस मात्रा तक रेचन करना चाहिए। इसप्रकार प्रातः में, मध्याह्न में, सायंकाल में तथा आधी रात को धीरे धीरे अस्सी कुम्भकों का अभ्यास करना चाहिए। इस प्रकार तीन मास तक अभ्यास करने से नाड़ी शुद्धि हो जाती है।⁸⁹ जबकि जाबालदर्शनोपनिषद में नाड़ीशोधन की इस विधि के साथ इडा नाड़ी द्वारा प्राणवायु को लेने के पश्चात् देहाग्नि के ज्वालाओं के समूह के साथ ध्यान करना चाहिए। और बिन्दुनाद के साथ अग्निबीज का चिन्तन करना चाहिए। तथा इसी प्रकार पिंगला नाड़ी से पूरक करने के पश्चात् अग्निबीजादि का स्मरण करना चाहिए। यह अभ्यास तीनों सन्ध्याओं के समय एकान्त में तीन-चार दिन तीन बार उसके बाद छः-छः बार करना चाहिए।⁹⁰

इडा और पिंगला के बीच में सुषुम्ना नाड़ी योनि के मध्य तक जाती है, वहीं सुषुम्ना के आधारमण्डल के बीच में ब्रह्मरन्ध्र है। जो साधक इसे जान लेता है वह बुद्धिमान् कर्मों के बन्धन से मुक्त हो जाता है। और ब्रह्मरन्ध्र के मुख में इन तीनों नाड़ियों का संगम निश्चित रूप से होता है। उस संगम में स्नान-ध्यान करने वालों की बिना किसी अवरोध के मुक्ति हो जाती है।⁹¹ जो साधक इडा और पिंगला के संगम में मानसिक स्नान-ध्यान करता है वह सभी पापों से मुक्त होकर सनातन ब्रह्म में लीन हो जाता है।⁹²

फलश्रुति

जब नाड़ी निर्मल हो जाती है तब उसके बाह्य लक्षण प्रकट होते हैं, जैसे शरीर का निश्चित रूप से पतला और कान्तिमान हो जाता है। कुम्भक सधता है। जठराग्नि प्रदीप्त होती है, अन्तःप्रवर्तित नाद का अनुभव होता है तथा आरोग्यता आती है।⁹³ नाड़ीशोधन के अभ्यास से समस्त नाड़ियों का सफल संचालन, बिन्दु का धारण होना, कषायों (मल) का दग्ध या नाश हो जाना, सभी पापों का नाश हो जाता है।⁹⁴

शिवसंहिता में शिवजी कहते हैं कि नाड़ीशोधन के फलस्वरूप योगी के शरीर में जो चिह्न दिखाई पड़ते हैं, उन चिह्नों को तुम्हारे कल्याण के लिये संक्षेप में बताता हूँ। नाड़ी शुद्धि से योगी का शरीर सन्तुलित, सुगन्धित, कान्तियुक्त तथा स्वर को साधने वाला बन जाता है।⁹⁵ शरीर में हल्कापन, मुख पर प्रसन्नता, स्वर में सौष्ठव, नयनों में तेजस्विता, रोग का अभाव, बिन्दु पर नियंत्रण, जठराग्नि की प्रदीप्ति तथा नाड़ियों की विशुद्धता, ये सब हठसिद्धि के लक्षण हैं।⁹⁶

निष्कर्ष

स्वरयोग में वर्णन है कि जो व्यक्ति नाड़ी, प्राण, तत्त्व तथा सुषुम्ना के मध्य इनके संयोग को ठीक प्रकार से जानता है वह निश्चित ही मोक्ष का अधिकारी होता है।⁹⁷ इस प्रकार मनुष्य के भीतर समस्त तीर्थ

विद्यमान है। यदि प्राणविद्या द्वारा आत्मसाधना कर ली जाए तो यह काया ही समस्त तीर्थों का संगम बन सकती है और इस तीर्थ यात्रा का जो महात्म्य बताया है वह अनायास ही मिल सकता है। इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना की तीर्थराज प्रयाग में गंगा, यमुना और सरस्वती के संगम की उपमा दी गई है और पुण्य फल अनंत बताया है।

योग शिक्षा विभाग

डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर, म.प्र.-470003

संदर्भ :

1. महर्षि अरविन्द, द सिन्धेसिस ऑफ योग, भाग 20 पृ. 515
2. गोपीनाथ, कविराज, भारतीय संस्कृति और साधना पृ. 16
3. मुण्डकोपनिषद् 2/3/6
4. शिव संहिता 5/55
5. श्वेताश्वतर उपनिषद् 1/5, 2/8
6. बृहदारण्यक उपनिषद् 4/2/3, मैत्री. उपनिषद् 7/11
7. चरक वि. 5/13
8. गोरक्षशतक 17
9. गोरक्षशतक 25
10. शिवस्वरोदय 18
11. शिवस्वरोदय 31, योगरसायन 73, योगचुड़ामणि उपनिषद् 18
12. शिव संहिता 2/1-5
13. जाबालदर्शनोपनिषद् 4/61
14. स्वच्छन्द तंत्र 7/11, शाण्डिल्योपनिषद् 1/4/11
15. शारदा तिलक 1/43
16. त्रिशिख ब्राह्मणोपनिषद् 75-76
17. योगरत्नाकर 2/11, नाड़ी विज्ञान 03
18. स्वच्छन्द तन्त्र 7/8-10
19. प्रपंचसार तन्त्र 1/90
20. शिव संहिता 2/13
21. त्रिशिखब्राह्मणोपनिषद् 75-76, बृहदारण्यक उपनिषद् 2/1/19
22. कठोपनिषद् 2/3/16, छान्दोग्य उपनिषद् 8/6/6-7
23. योगचुड़ामणि उपनिषद् 15, प्रश्नोपनिषद् 3/6, क्षुरिकोपनिषद् 15, बृहत्पराशर स्मृति 12/286, याज्ञवल्क्य स्मृति व भूतशुद्धितंत्र
24. आत्रेय, शान्तिप्रकाश, योग मनोविज्ञान पृ. 38
25. हठप्रदीपिका 4/18
26. वराहोपनिषद् 5/19-21, शाण्डिल्योपनिषद् 1/4/2-7, भूतशुद्धितन्त्र, षट्चक्र निरूपण, पृ. 7
27. वशिष्ठ संहिता 2/12
28. जाबालदर्शनोपनिषद् 4/1-4
29. याज्ञवल्क्य संहिता 4/15-17, हठ प्रदीपिका ज्यो. टी. 3/113
30. गोरक्षशतक 16
31. हठ प्रदीपिका 4/18
32. हठ प्रदीपिका ज्यो. टी. 4/18

33. वशिष्ठ संहिता (यो. का.) 2/6
34. शिव स्वरोदय 32
35. शिव संहिता 2/29-31
36. गोरक्ष शतक 17
37. (क) गोरक्ष पद्धति 26 (ख) योग मार्तण्ड 17 (ग) ध्यानबिन्दु उपनिषद् 51 (घ) योग चूड़ामणि उपनिषद् 15
38. शिव स्वरोदय 33-34
39. जाबालदर्शनोपनिषद् 4/6-8, शांडिल्य उप. 1/4/9, वराहोपनिषद् (5/23-27), शिव संहिता 2/14-15, हठरत्नावली 4/31-32, वशिष्ठ संहिता 2/20, याज्ञवल्क्य संहिता 4/26-46, हठतत्त्व कौमुदी 23/1-4
40. दर्शनोपनिषद् 4/6-8
41. जाबालदर्शनोपनिषद् 4/35-38
42. शाण्डिल्योपनिषद् उपनिषद् ज्ञान ज्योति पृ. 181
43. जाबालदर्शनोपनिषद् 4.6.8, उपनिषद् ज्ञान ज्योति पृ. 226
44. शाण्डिल्योपनिषद् उपनिषद् ज्ञान ज्योति पृ.181
45. वराह उपनिषद् 22
46. योग शिखा उपनिषद् 17-27
47. वशिष्ठ संहिता (यो. का.) 2/20-23
48. जाबालदर्शनोपनिषद् 4/13/23
49. याज्ञवल्क्य संहिता 4/26-46
50. ध्यानबिन्दुपनिषद् 52-53, योगचूड़ामण्युपनिषद् 16-18, त्रिशिखब्राह्मणोपनिषद् 2/74, शिवस्वरोदय 36-37, योगरत्नाकर 2/11, सिद्धसिद्धान्त पद्धति 1/68, गोरक्ष शतक 17
51. गोरक्ष पद्धति 27-28, गोरक्ष शतक 18-19
52. शिवस्वरोदय 34-37
53. योगरत्नाकर 2/11, योगरसायन 76
54. हठरत्नावली 4/36-39
55. हठरत्नावली 2/155
56. हठरत्नावली 2/156
57. वशिष्ठ संहिता (यो. का.) 27-30
58. योग रत्नाकर 2/13
59. गोरक्षसंहिता 1/31, गोरक्षशतकम् 23, गोरक्षपद्धति 32, शिवस्वरोदय 41
60. शिव संहिता 2/25-27
61. षट्चक्रनिरूपणम् 1/1
62. शिव संहिता 2/16
63. वशिष्ठ संहिता (यो. का.) 2/19
64. हठप्रदीपिका 3/4
65. योगशिखोपनिषद् 1/119
66. शाण्डिल्य उपनिषद् 1/4/10
67. याज्ञवल्क्यसंहिता 4/31
68. अद्वैतोत्तरकोपनिषद् 05
69. योग याज्ञवल्क्य संहिता. 4/28-29
70. योग याज्ञवल्क्य संहिता. 4/29-31
71. सिद्धसिद्धान्त पद्धति 1/68
72. हठरत्नावली 4/38
73. योगबीज 128-130
74. योग रत्नाकर 2/14-15
75. हठतत्त्व कौमुदी 23/31-32

76. शिव संहिता 5/158-159
77. हठतत्त्व कौमुदी 23-39
78. शिवस्वरोदय 18
79. शिवस्वरोदय 124
80. महायोग विज्ञान (पृ. 7.16)
81. हठप्रदीपिका 2/4
82. हठरत्नाली 2/2
83. हठप्रदीपिका 1/39
84. गोरक्ष पद्धति 94, हठप्रदीपिका 2/5
85. हठप्रदीपिका 2/6
86. हठप्रदीपिका 2/7-8
87. हठप्रदीपिका 2/10, शिवसंहिता 3/24-28, शण्डिल्योपनिषद 1/7/1
88. हठरत्नावली 3/86
89. योगतत्वोपनिषद 41-44
90. जाबालदर्शनोपनिषद 5/7-10, शांडिल्योपनिषद 1/5/4
91. शिव संहिता 5/167-168
92. शिव संहिता 5/171
93. हठप्रदीपिका 2/19-20, हठरत्नावली 3/94-95, वशिष्ठ संहिता 2/68-69, योगतत्वोपनिषद 45-46, जाबालदर्शनोपनिषद 5/11-12
94. शिवसंहिता 4/31
95. शिवसंहिता 3/30
96. हठप्रदीपिका 2/78
97. शिवस्वरोदय 18